



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन में ज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन

Anuranjan Raj

Research Scholar, Department of Philosophy, Amaltas University, Dewas

Dr. Ram Asare Prasad

Supervisor, Department of Philosophy, Amaltas University, Dewas

सार

भारतीय दर्शन की समृद्ध परम्परा में बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन ज्ञानमीमांसा (Epistemology) के दो अत्यंत महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली दार्शनिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। दोनों दर्शनों का प्रमुख उद्देश्य सत्य की प्राप्ति एवं मानव जीवन के परम लक्ष्य की व्याख्या करना है, किन्तु ज्ञान के स्वरूप, साधनों तथा अंतिम सत्य के संबंध में इनके विचारों में उल्लेखनीय समानताएँ एवं भिन्नताएँ विद्यमान हैं। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन में ज्ञान की अवधारणा का तुलनात्मक विश्लेषण करना तथा उपलब्ध साहित्य के आधार पर उनके दार्शनिक आधारों एवं समकालीन प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना है। यह अध्ययन पूर्णतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिसमें उपनिषद, ब्रह्मसूत्र, भगवद्गीता, त्रिपिटक, बौद्ध एवं वेदान्त साहित्य, शोध-पत्रों, पुस्तकों तथा प्रतिष्ठित विद्वानों के प्रकाशित अध्ययनों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि बौद्ध दर्शन प्रत्यक्ष अनुभव, तर्क, प्रतीत्यसमुत्पाद, अनित्य एवं अनात्म के सिद्धान्तों के आधार पर ज्ञान की व्याख्या करता है तथा अज्ञान को दुःख का मूल कारण मानते हुए प्रज्ञा के माध्यम से निर्वाण की प्राप्ति पर बल देता है। इसके विपरीत वेदान्त दर्शन ब्रह्म को परम सत्य तथा आत्मा को ब्रह्म का अभिन्न स्वरूप मानते हुए श्रुति, युक्ति एवं अनुभूति के माध्यम से ब्रह्मज्ञान को मोक्ष का आधार स्वीकार करता है। तुलनात्मक अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि दोनों दर्शनों में ज्ञान केवल बौद्धिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि आत्मिक एवं व्यावहारिक परिवर्तन का माध्यम भी है। साहित्य समीक्षा से यह भी स्पष्ट होता है कि आधुनिक शिक्षा, नैतिक दर्शन, मनोविज्ञान, आध्यात्मिक चिंतन तथा मानवीय मूल्यों के विकास में बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन की ज्ञान सम्बन्धी अवधारणाएँ आज भी अत्यंत प्रासंगिक हैं। निष्कर्षतः दोनों दार्शनिक परम्पराएँ भिन्न वैचारिक आधारों पर विकसित होने के बावजूद मानव जीवन में सत्य, विवेक, आत्मबोध, नैतिकता एवं आध्यात्मिक उत्कर्ष की स्थापना में समान रूप से महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती हैं।

मुख्य शब्द (बौद्ध दर्शन, वेदान्त दर्शन, ज्ञानमीमांसा, तुलनात्मक अध्ययन, ब्रह्मज्ञान।

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्ध ज्ञान-परम्पराओं में से एक है, जिसने मानव जीवन, सत्य, ज्ञान, आत्मा तथा मोक्ष जैसे मूलभूत दार्शनिक प्रश्नों पर गहन एवं तार्किक चिंतन प्रस्तुत किया है। भारतीय दार्शनिक परम्परा में ज्ञान (ज्ञानमीमांसा) को केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं माना गया है, बल्कि उसे मानव जीवन के आध्यात्मिक विकास, नैतिक परिष्कार एवं अंतिम मुक्ति का आधार स्वीकार किया गया है।



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

भारतीय दर्शन की विभिन्न शाखाओं ने ज्ञान की उत्पत्ति, स्वरूप, साधन एवं उसकी प्रमाणिकता के विषय में अपने-अपने सिद्धान्त विकसित किए हैं। इसी संदर्भ में बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन भारतीय दार्शनिक परम्परा के दो प्रमुख विचार-प्रवाह हैं, जिन्होंने ज्ञान के स्वरूप एवं उद्देश्य को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से व्याख्यायित किया है। बौद्ध दर्शन अनुभव, तर्क, प्रत्यक्ष एवं प्रज्ञा के माध्यम से सत्य की प्राप्ति पर बल देता है, जबकि वेदान्त दर्शन ब्रह्मज्ञान, आत्मसाक्षात्कार एवं श्रुति-प्रमाण के माध्यम से परम सत्य के बोध को जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य मानता है। यद्यपि दोनों दर्शनों की दार्शनिक आधारभूमि एवं आध्यात्मिक अवधारणाएँ अलग हैं, तथापि दोनों का उद्देश्य अज्ञान का निवारण, सत्य की प्राप्ति तथा मानव जीवन को दुःख एवं बन्धनों से मुक्त करना है। इस प्रकार ज्ञान भारतीय दार्शनिक परम्परा में केवल सूचना या बौद्धिक समझ का विषय नहीं, बल्कि जीवन के समग्र परिवर्तन का माध्यम माना गया है।

बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन में ज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय दर्शन की विविधता, गहराई तथा बौद्धिक समृद्धि को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। बौद्ध दर्शन में अनित्य, अनात्म एवं प्रतीत्यसमुत्पाद के सिद्धान्तों के आधार पर ज्ञान को निरंतर परिवर्तनशील वास्तविकता के बोध से जोड़ा गया है तथा अज्ञान (अविद्या) को समस्त दुःखों का मूल कारण माना गया है। इसके विपरीत वेदान्त दर्शन, विशेषकर अद्वैत वेदान्त, ब्रह्म को परम सत्य तथा आत्मा को ब्रह्म का अभिन्न स्वरूप मानते हुए ब्रह्मज्ञान को मोक्ष का एकमात्र साधन स्वीकार करता है। दोनों दर्शनों में ज्ञान की प्राप्ति के साधन, सत्य की अवधारणा, आत्मा के प्रति दृष्टिकोण तथा मुक्ति के स्वरूप में महत्वपूर्ण भिन्नताएँ दिखाई देती हैं, किन्तु नैतिक जीवन, आत्मानुशासन, विवेक, करुणा एवं आध्यात्मिक उन्नयन के महत्व को दोनों समान रूप से स्वीकार करते हैं। वर्तमान समय में मानसिक तनाव, नैतिक संकट, सामाजिक असंतुलन एवं आध्यात्मिक रिक्तता जैसी चुनौतियों के संदर्भ में इन दोनों दर्शनों की ज्ञान सम्बन्धी अवधारणाएँ विशेष रूप से प्रासंगिक हैं। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन में ज्ञान की अवधारणा का तुलनात्मक विश्लेषण करना, उनके प्रमुख दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन करना तथा उपलब्ध साहित्य के आधार पर उनकी समकालीन उपयोगिता एवं भारतीय ज्ञान-परम्परा में उनके योगदान का समग्र मूल्यांकन प्रस्तुत करना है।

ज्ञान का अर्थ एवं स्वरूप

ज्ञान का सामान्य अर्थ किसी वस्तु, घटना, विचार अथवा सत्य को यथार्थ रूप में जानना और उसका बोध प्राप्त करना है। भारतीय दार्शनिक परम्परा में ज्ञान को 'ज्ञाता', 'ज्ञेय' और 'ज्ञान' के पारस्परिक संबंध के आधार पर समझा गया है। ज्ञान का स्वरूप केवल इन्द्रियजन्य सूचना तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें तर्क, अनुभव, अंतर्दृष्टि और आध्यात्मिक अनुभूति भी सम्मिलित हैं। बौद्ध दर्शन में ज्ञान का स्वरूप अनुभवपरक, विश्लेषणात्मक और व्यावहारिक है। यहाँ यथार्थ ज्ञान वह है जो व्यक्ति को वस्तुओं की अनित्यता, दुःखात्मकता, अनात्मता और कारण-कार्य की परस्पर निर्भरता का बोध कराए। बौद्ध दृष्टिकोण में स्थायी आत्मा या अपरिवर्तनशील सत्ता का ज्ञान स्वीकार नहीं किया जाता; इसके स्थान पर सतत परिवर्तनशील मानसिक और भौतिक प्रक्रियाओं की यथार्थ समझ को महत्त्व दिया जाता है। प्रज्ञा ज्ञान का उच्चतम स्वरूप है, जो व्यक्ति को मिथ्या दृष्टियों और आसक्ति से मुक्त करती है। इसके विपरीत, वेदान्त



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

में ज्ञान का स्वरूप आत्मतत्त्व और परम सत्य के बोध से संबंधित है। अद्वैत वेदान्त के अनुसार सामान्य सांसारिक ज्ञान व्यवहारिक स्तर पर उपयोगी है, किंतु सर्वोच्च या पारमार्थिक ज्ञान ब्रह्म के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान है। आत्मा को नित्य, शुद्ध और चेतन स्वरूप माना गया है तथा आत्मा और ब्रह्म की एकता का अनुभव ही सच्चे ज्ञान की चरम अवस्था है। इस प्रकार बौद्ध दर्शन में ज्ञान परिवर्तनशील अस्तित्व की यथार्थ प्रकृति को पहचानने वाली प्रज्ञा है, जबकि वेदान्त में यह अपरिवर्तनशील आत्मतत्त्व और ब्रह्म की अनुभूति है। दोनों परम्पराएँ यह स्वीकार करती हैं कि केवल शाब्दिक या बौद्धिक जानकारी वास्तविक ज्ञान नहीं है; ज्ञान तभी सार्थक है जब वह व्यक्ति की दृष्टि, चेतना और जीवन को परिवर्तित करे तथा अज्ञान से उत्पन्न बंधनों का निवारण करे। इस दृष्टि से दोनों दर्शनों में ज्ञान का स्वरूप सैद्धांतिक होने के साथ-साथ गहन रूप से आध्यात्मिक और मुक्तिपरक भी है।

ज्ञान के स्रोत

भारतीय दर्शन में ज्ञान (ज्ञानमीमांसा) का विशेष महत्व है, क्योंकि ज्ञान को सत्य की प्राप्ति तथा मोक्ष का आधार माना गया है। विभिन्न दार्शनिक परम्पराओं ने ज्ञान के अनेक स्रोतों को स्वीकार किया है, जिनके माध्यम से मनुष्य यथार्थ का बोध प्राप्त करता है। प्रमुख ज्ञान स्रोत निम्नलिखित हैं—

1. प्रत्यक्ष :

प्रत्यक्ष ज्ञान वह है जो इन्द्रियों के माध्यम से किसी वस्तु, घटना अथवा स्थिति का सीधा अनुभव करके प्राप्त होता है। यह ज्ञान का सबसे प्राचीन एवं विश्वसनीय स्रोत माना जाता है। बौद्ध दर्शन प्रत्यक्ष अनुभव को विशेष महत्व देता है, जबकि वेदान्त भी इसे प्रारम्भिक ज्ञान का आधार स्वीकार करता है।

2. अनुमान:

अनुमान वह ज्ञान है जो तर्क, कारण-कार्य संबंध तथा पूर्व अनुभव के आधार पर प्राप्त होता है। जब किसी तथ्य का प्रत्यक्ष ज्ञान संभव नहीं होता, तब बुद्धि और तर्क के माध्यम से निष्कर्ष निकाला जाता है। भारतीय दर्शन में अनुमान को सत्य की खोज का एक महत्वपूर्ण साधन माना गया है।

3. उपमान:

उपमान का अर्थ है समानता या तुलना के आधार पर ज्ञान प्राप्त करना। किसी ज्ञात वस्तु की विशेषताओं की तुलना अज्ञात वस्तु से करके उसके विषय में ज्ञान अर्जित किया जाता है। न्याय दर्शन में उपमान को स्वतंत्र प्रमाण के रूप में स्वीकार किया गया है।

4. शब्द या आगम:

विश्वसनीय गुरु, विद्वान अथवा प्रमाणिक ग्रंथों से प्राप्त ज्ञान को शब्द या आगम प्रमाण कहा जाता है। वेदान्त दर्शन में वेद एवं उपनिषदों को सर्वोच्च प्रमाण माना गया है, जबकि बौद्ध दर्शन में बुद्ध के उपदेशों एवं त्रिपिटक का विशेष महत्व है।

5. अनुभूति या आत्मानुभव :

अनुभूति वह उच्चतम ज्ञान है जो ध्यान, साधना, आत्मचिन्तन एवं आध्यात्मिक अनुभव के माध्यम से प्राप्त होता है। वेदान्त में इसे ब्रह्मज्ञान तथा आत्मसाक्षात्कार का माध्यम माना गया है, जबकि बौद्ध दर्शन में



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

प्रज्ञा के द्वारा निर्वाण की प्राप्ति का मार्ग बताया गया है। यही ज्ञान मनुष्य को अज्ञान से मुक्त कर सत्य, आत्मबोध एवं आध्यात्मिक उन्नति की ओर अग्रसर करता है।

बौद्ध दर्शन में ज्ञान का स्वरूप

बौद्ध दर्शन में ज्ञान का स्वरूप मूलतः अनुभवपरक, यथार्थवादी, विश्लेषणात्मक और मुक्तिपरक है, जिसका प्रमुख उद्देश्य मनुष्य को अविद्या से मुक्त करके दुःख-निरोध तथा निर्वाण की ओर अग्रसर करना है। बुद्ध के अनुसार मानव जीवन में दुःख का मूल कारण अविद्या है, जिसके कारण व्यक्ति संसार और स्वयं के वास्तविक स्वरूप को समझ नहीं पाता तथा अनित्य वस्तुओं को नित्य, दुःख को सुख और अनात्म को आत्म मानकर तृष्णा एवं आसक्ति में बंधा रहता है। इसलिए बौद्ध दर्शन में वास्तविक ज्ञान का अर्थ वस्तुओं को उनके यथार्थ स्वरूप में देखना है, जिसे 'यथाभूत ज्ञान-दर्शन' कहा जाता है। इस ज्ञान का आधार चार आर्य सत्य, प्रतीत्यसमुत्पाद, अनित्य, दुःख और अनात्म जैसे मूल सिद्धांत हैं। चार आर्य सत्यों का सम्यक् ज्ञान व्यक्ति को दुःख की वास्तविकता, उसके कारण, उसके निरोध और दुःख-निरोध की ओर ले जाने वाले मार्ग का बोध कराता है। इसी प्रकार प्रतीत्यसमुत्पाद का ज्ञान यह स्पष्ट करता है कि संसार की कोई भी वस्तु या घटना स्वतंत्र एवं स्थायी रूप से अस्तित्व में नहीं है, बल्कि प्रत्येक अवस्था अनेक कारणों और परिस्थितियों पर निर्भर होकर उत्पन्न होती है। बौद्ध दर्शन में ज्ञान का सर्वोच्च रूप 'प्रज्ञा' है, जो सामान्य बौद्धिक जानकारी से भिन्न प्रत्यक्ष आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि का प्रतिनिधित्व करती है। प्रज्ञा के माध्यम से साधक अस्तित्व की वास्तविक प्रकृति को समझकर मिथ्या धारणाओं, तृष्णा और आसक्ति से मुक्त होता है। बौद्ध ज्ञानमीमांसा के व्यवस्थित विकास में दिङ्नाग और धर्मकीर्ति का विशेष योगदान रहा, जिन्होंने मुख्यतः प्रत्यक्ष और अनुमान को प्रामाणिक ज्ञान के साधन के रूप में स्वीकार किया। प्रत्यक्ष वस्तु का तत्काल और कल्पनारहित बोध प्रदान करता है, जबकि अनुमान तर्क एवं ज्ञात लक्षणों के आधार पर अप्रत्यक्ष विषयों का ज्ञान कराता है। विभिन्न बौद्ध सम्प्रदायों में ज्ञान के स्वरूप की व्याख्या में कुछ भिन्नताएँ भी मिलती हैं; विशेषतः माध्यमिक दर्शन शून्यता के बोध पर और योगाचार दर्शन विज्ञान अथवा चेतना की भूमिका पर विशेष बल देता है। फिर भी समग्र रूप से बौद्ध दर्शन में ज्ञान केवल सैद्धांतिक चिंतन नहीं, बल्कि नैतिक आचरण, ध्यान और प्रज्ञा से विकसित होने वाली ऐसी रूपांतरणकारी चेतना है, जो अज्ञान का निवारण करके व्यक्ति को संसार के बंधन और दुःख से मुक्त करते हुए निर्वाण की प्राप्ति की दिशा में ले जाती है।

बौद्ध ज्ञान की अवधारणा

बौद्ध दर्शन में ज्ञान की अवधारणा का मूल आधार यथार्थ को उसके वास्तविक स्वरूप में जानना है, जिसे बौद्ध परम्परा में 'यथाभूत ज्ञान-दर्शन' के रूप में समझा जाता है। इस दृष्टि से ज्ञान वह चेतन अवस्था है जिसमें व्यक्ति संसार, जीवन और अपने व्यक्तित्व से संबंधित मिथ्या धारणाओं से मुक्त होकर अस्तित्व की वास्तविक प्रकृति का बोध करता है। बुद्ध के अनुसार सामान्य मनुष्य अविद्या के कारण परिवर्तनशील वस्तुओं को स्थायी तथा पंचस्कन्धों से निर्मित व्यक्तित्व को स्थायी आत्मा मान लेता है। यही अज्ञान तृष्णा, उपादान, कर्म और पुनर्जन्म की प्रक्रिया को जन्म देता है। अतः बौद्ध ज्ञान का प्रमुख कार्य अविद्या का



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

निवारण करना है। चार आर्य सत्तों का ज्ञान इस प्रक्रिया का आधार है, क्योंकि इनके माध्यम से साधक दुःख की वास्तविकता, दुःख के कारण के रूप में तृष्णा, दुःख के निरोध की संभावना और अष्टांगिक मार्ग को समझता है। इसी प्रकार अनित्य का ज्ञान यह स्पष्ट करता है कि सभी संस्कारित वस्तुएँ परिवर्तनशील हैं, अनात्म का सिद्धांत स्थायी और स्वतंत्र आत्मसत्ता की धारणा का निषेध करता है तथा प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धांत सभी घटनाओं की परस्पर निर्भरता को प्रकट करता है। बौद्ध ज्ञान की अवधारणा में सम्यक् दृष्टि का विशेष महत्त्व है, जो आर्य अष्टांगिक मार्ग का प्रथम अंग है और साधक की ज्ञानात्मक यात्रा का आधार बनती है। बौद्ध दर्शन ज्ञान को केवल ग्रंथों, परम्पराओं या आधिकारिक कथनों की स्वीकृति तक सीमित नहीं करता, बल्कि विवेकपूर्ण परीक्षण और साधना से प्राप्त अनुभव को महत्त्व देता है। विभिन्न बौद्ध परम्पराओं में ज्ञान की व्याख्या में अंतर होने के बावजूद उसका मुक्तिपरक उद्देश्य समान रहता है। इस प्रकार बौद्ध ज्ञान की अवधारणा सत्य के अनुभव, भ्रम के निराकरण और चेतना के रूपांतरण पर आधारित है, जिसमें ज्ञान की अंतिम सार्थकता व्यक्ति को दुःख, तृष्णा और संसार के बंधन से मुक्त करके निर्वाण की दिशा में अग्रसर करने में निहित है।

एवं अनुभव

बौद्ध दर्शन में प्रत्यक्ष और अनुभव को ज्ञान की प्राप्ति के अत्यंत महत्त्वपूर्ण आधारों के रूप में स्वीकार किया गया है। बौद्ध चिंतन की मूल प्रवृत्ति अनुभवपरक है, क्योंकि बुद्ध ने धार्मिक और दार्शनिक सत्य को केवल परम्परा, विश्वास अथवा शास्त्रीय अधिकार के आधार पर स्वीकार करने के स्थान पर उसके विवेकपूर्ण परीक्षण और व्यक्तिगत अनुभूति पर बल दिया। प्रत्यक्ष ज्ञान का सामान्य अर्थ किसी वस्तु या तथ्य का तत्काल बोध है, जिसमें ज्ञान और ज्ञेय के बीच किसी जटिल तार्किक मध्यस्थता की आवश्यकता नहीं होती। बौद्ध ज्ञानमीमांसा के व्यवस्थित विकास में दिङ्नाग और धर्मकीर्ति ने प्रत्यक्ष को प्रामाणिक ज्ञान का प्रमुख साधन माना तथा इसे कल्पना और वैचारिक आरोप से मुक्त ज्ञान के रूप में परिभाषित किया। उनके अनुसार प्रत्यक्ष में वस्तु का विशिष्ट स्वरूप तत्काल रूप में ज्ञात होता है, जबकि भाषा, नाम और सामान्य अवधारणाओं से निर्मित ज्ञान वैकल्पिक या संकल्पनात्मक स्तर से संबंधित होता है। बौद्ध दर्शन में अनुभव का क्षेत्र केवल इन्द्रियजन्य ज्ञान तक सीमित नहीं है, बल्कि ध्यान और साधना से उत्पन्न आंतरिक तथा आध्यात्मिक अनुभूति भी इसमें सम्मिलित है। साधक अपने शरीर, संवेदनाओं, मानसिक अवस्थाओं और धर्मों का सजग निरीक्षण करके उनकी अनित्यता और परस्पर निर्भरता को अनुभव करता है। विषयना जैसी ध्यान-पद्धतियाँ इसी प्रत्यक्ष निरीक्षण और अनुभवजन्य बोध पर आधारित हैं। इस प्रकार अनुभव साधक को यह समझने में सहायता करता है कि शरीर, विचार, भावनाएँ और संवेदनाएँ निरंतर परिवर्तनशील हैं और इनमें कोई स्थायी आत्मतत्त्व नहीं है। प्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त यह अंतर्दृष्टि केवल सैद्धांतिक जानकारी की अपेक्षा अधिक परिवर्तनकारी मानी जाती है। अतः बौद्ध दर्शन में प्रत्यक्ष एवं अनुभव ज्ञान के ऐसे साधन हैं जो व्यक्ति को वास्तविकता के निकट ले जाते हैं, मिथ्या धारणाओं को दूर करते हैं और अनित्य, दुःख तथा अनात्म के सत्य का व्यक्तिगत बोध कराते हैं। इसी अनुभवजन्य ज्ञान के क्रमिक विकास से साधक में प्रज्ञा उत्पन्न होती है और निर्वाण का मार्ग प्रशस्त होता है।



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

प्रज्ञा का महत्त्व

बौद्ध दर्शन में प्रज्ञा को ज्ञान का सर्वोच्च और आध्यात्मिक रूप माना गया है, क्योंकि इसके माध्यम से साधक अस्तित्व की वास्तविक प्रकृति का गहन बोध प्राप्त करता है और अविद्या से मुक्त होने की दिशा में अग्रसर होता है। प्रज्ञा सामान्य बौद्धिक ज्ञान, सूचना या तार्किक समझ तक सीमित नहीं है, बल्कि यह ऐसी अंतर्दृष्टि है जिसके द्वारा व्यक्ति वस्तुओं को उनके वास्तविक स्वरूप में देखता और समझता है। बौद्ध दर्शन के अनुसार दुःख का मूल कारण अविद्या है और अविद्या का वास्तविक निराकरण प्रज्ञा द्वारा ही संभव है। प्रज्ञा साधक को अनित्य, दुःख, अनात्म और प्रतीत्यसमुत्पाद की वास्तविकता का बोध कराती है, जिससे संसार के प्रति उसकी मिथ्या धारणाएँ और आसक्ति धीरे-धीरे समाप्त होने लगती हैं। बौद्ध साधना में शील, समाधि और प्रज्ञा को परस्पर संबंधित माना गया है। शील मनुष्य के आचरण को शुद्ध करता है, समाधि चित्त को स्थिर और एकाग्र बनाती है तथा प्रज्ञा उस शुद्ध एवं एकाग्र चित्त को वास्तविकता की यथार्थ प्रकृति समझने में सक्षम बनाती है। आर्य अष्टांगिक मार्ग में सम्यक् दृष्टि और सम्यक् संकल्प को प्रज्ञा से संबंधित माना जाता है, जिससे स्पष्ट होता है कि बौद्ध साधना में सही ज्ञान और सही दृष्टिकोण का केंद्रीय स्थान है। महायान बौद्ध दर्शन में प्रज्ञा का महत्त्व और अधिक व्यापक रूप में सामने आता है, जहाँ 'प्रज्ञापारमिता' को बोधिसत्त्व के आध्यात्मिक विकास की प्रमुख पूर्णताओं में माना गया है। विशेषतः माध्यमिक दर्शन में प्रज्ञा के द्वारा सभी धर्मों की शून्यता और स्वभाव-रहितता का बोध होता है। प्रज्ञा के विकास से व्यक्ति अहंकार, आसक्ति और द्वैतमूलक दृष्टि से ऊपर उठता है तथा करुणा का भी विस्तार होता है। इस प्रकार बौद्ध दर्शन में प्रज्ञा केवल ज्ञान का एक प्रकार नहीं, बल्कि मुक्ति की निर्णायक शक्ति है, जो अविद्या का विनाश करके साधक की चेतना में मौलिक परिवर्तन उत्पन्न करती है और अंततः उसे दुःख-निरोध तथा निर्वाण की अवस्था की ओर ले जाती है।

बौद्ध दर्शन के प्रमाण एवं ज्ञानमीमांसा

बौद्ध दर्शन की ज्ञानमीमांसा भारतीय दार्शनिक परम्परा में एक विशिष्ट और सुव्यवस्थित चिंतन-पद्धति के रूप में विकसित हुई, जिसका प्रमुख उद्देश्य यथार्थ ज्ञान और मिथ्या ज्ञान के बीच अंतर स्थापित करते हुए मनुष्य को अविद्या से मुक्ति की दिशा प्रदान करना है। बौद्ध दर्शन में 'प्रमाण' से तात्पर्य उस विश्वसनीय साधन से है जिसके द्वारा यथार्थ और अविसंवादी ज्ञान की प्राप्ति होती है। प्रारम्भिक बौद्ध चिंतन में ज्ञान की प्रामाणिकता को अनुभव, विवेक और व्यावहारिक परीक्षण से जोड़ा गया, जबकि बाद में दिङ्नाग और धर्मकीर्ति जैसे बौद्ध तर्कशास्त्रियों ने प्रमाणमीमांसा को व्यवस्थित दार्शनिक स्वरूप प्रदान किया। इस परम्परा में मुख्यतः दो प्रमाण—प्रत्यक्ष और अनुमान—स्वीकार किए गए हैं। प्रत्यक्ष को ऐसा तात्कालिक ज्ञान माना गया है जो मूलतः कल्पना, शब्द और संकल्पनात्मक आरोप से मुक्त होता है तथा वस्तु के विशिष्ट स्वरूप का बोध कराता है। इन्द्रिय प्रत्यक्ष के अतिरिक्त बौद्ध चिंतन में मानसिक अनुभव और योगजन्य अनुभूति की भी चर्चा मिलती है। दूसरी ओर, अनुमान वह ज्ञान है जो किसी प्रत्यक्षतः अनुपस्थित वस्तु या तथ्य को ज्ञात लक्षण, कारण अथवा तार्किक संबंध के आधार पर स्थापित करता है। उदाहरणतः धुँएँ को देखकर अग्नि का ज्ञान अनुमान के माध्यम से प्राप्त होता है। दिङ्नाग और धर्मकीर्ति



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

ने अनुमान की तार्किक संरचना तथा वैध हेतु की विशेषताओं का सूक्ष्म विश्लेषण करके भारतीय तर्कशास्त्र के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। बौद्ध ज्ञानमीमांसा में शब्द को सामान्यतः स्वतंत्र प्रमाण का दर्जा नहीं दिया गया, क्योंकि किसी विश्वसनीय व्यक्ति या ग्रंथ से प्राप्त कथन की प्रामाणिकता अंततः प्रत्यक्ष अथवा अनुमान के आधार पर ही निर्धारित की जाती है। इसी प्रकार उपमान आदि अन्य प्रमाणों को भी स्वतंत्र न मानकर प्रत्यक्ष या अनुमान में समाहित करने का प्रयास किया गया। बौद्ध ज्ञानमीमांसा की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता ज्ञान की व्यावहारिक सार्थकता है; सत्य ज्ञान वह है जो वस्तु के संबंध में सफल व्यवहार की ओर ले जाए और भ्रम का निराकरण करे। इस ज्ञानमीमांसीय दृष्टिकोण का संबंध बौद्ध दर्शन के अनित्य, अनात्म और प्रतीत्यसमुत्पाद जैसे सिद्धांतों से भी है, क्योंकि ज्ञान को किसी स्थायी आत्मा का गुण न मानकर कारण-प्रत्ययों से उत्पन्न चेतन प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है। इस प्रकार बौद्ध प्रमाणमीमांसा प्रत्यक्ष अनुभव और तार्किक अनुमान के समन्वय पर आधारित एक आलोचनात्मक ज्ञान-पद्धति प्रस्तुत करती है, जिसका अंतिम आध्यात्मिक उद्देश्य सम्यक् ज्ञान और प्रज्ञा के माध्यम से अविद्या का निवारण कर दुःख से मुक्ति तथा निर्वाण की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करना है।

प्रत्यक्ष प्रमाण

बौद्ध ज्ञानमीमांसा में प्रत्यक्ष प्रमाण को यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति का अत्यंत महत्त्वपूर्ण और मूलभूत साधन माना गया है। सामान्य अर्थ में प्रत्यक्ष वह ज्ञान है जो किसी वस्तु या तथ्य के साथ तत्काल संपर्क अथवा अनुभव के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है और जिसमें अनुमानात्मक तर्क की मध्यस्थता नहीं होती। बौद्ध तर्कशास्त्री दिङ्नाग ने प्रत्यक्ष को 'कल्पनापोढ' अर्थात् कल्पना अथवा संकल्पनात्मक निर्माण से रहित माना, जबकि धर्मकीर्ति ने इसके साथ 'अभ्रान्त' अर्थात् अविसेवादी होने की विशेषता पर भी बल दिया। इस दृष्टि से शुद्ध प्रत्यक्ष वस्तु के स्वलक्षण का बोध कराता है, जबकि नाम, जाति, गुण और सामान्य अवधारणाओं से संबंधित ज्ञान संकल्पनात्मक होता है। बौद्ध ज्ञानमीमांसा में प्रत्यक्ष के विभिन्न रूपों की चर्चा की गई है, जिनमें इन्द्रिय प्रत्यक्ष, मानसिक प्रत्यक्ष, आत्मसंवेदन तथा योगी प्रत्यक्ष प्रमुख हैं। इन्द्रिय प्रत्यक्ष आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा जैसी इन्द्रियों तथा उनके विषयों के संपर्क से उत्पन्न होता है। मानसिक प्रत्यक्ष इन्द्रियज्ञान के पश्चात् उत्पन्न होने वाली मानसिक चेतना से संबंधित है। आत्मसंवेदन का आशय ज्ञान या चेतना के स्वयं के अनुभव से है, जबकि योगी प्रत्यक्ष गहन ध्यान और साधना से प्राप्त विशिष्ट आध्यात्मिक अनुभूति को व्यक्त करता है। बौद्ध दर्शन में भ्रम, संशय और कल्पना को यथार्थ प्रत्यक्ष की श्रेणी में नहीं रखा जाता, क्योंकि वे वस्तु के वास्तविक स्वरूप का विश्वसनीय ज्ञान प्रदान नहीं करते। प्रत्यक्ष का दार्शनिक महत्त्व इस तथ्य में भी निहित है कि यह बौद्ध दर्शन के अनुभवपरक चरित्र को स्पष्ट करता है। अनित्य, दुःख और अनात्म जैसे सत्यों का वास्तविक बोध केवल सैद्धांतिक अध्ययन से पूर्ण नहीं होता, बल्कि साधना और सजग निरीक्षण के माध्यम से उनके प्रत्यक्ष अनुभव की आवश्यकता होती है। अतः प्रत्यक्ष प्रमाण बौद्ध ज्ञानमीमांसा में केवल बाह्य वस्तुओं के ज्ञान का साधन नहीं, बल्कि आंतरिक चेतना और आध्यात्मिक सत्य के अनुभव का भी आधार है।



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

अनुमान प्रमाण

बौद्ध ज्ञानमीमांसा में अनुमान प्रमाण प्रत्यक्ष के बाद यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति का दूसरा प्रमुख साधन है। अनुमान का अर्थ ऐसे तथ्य या वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना है जो तत्काल प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित न हो, किंतु किसी ज्ञात चिह्न, लक्षण अथवा तार्किक संबंध के आधार पर सिद्ध किया जा सके। उदाहरण के लिए, किसी पर्वत पर धुआँ देखकर वहाँ अग्नि होने का ज्ञान अनुमान से प्राप्त होता है, क्योंकि धुँएँ और अग्नि के बीच एक निश्चित संबंध स्वीकार किया जाता है। बौद्ध तर्कशास्त्र के विकास में दिङ्नाग और धर्मकीर्ति ने अनुमान की संरचना, वैधता और तार्किक आधार का अत्यंत सूक्ष्म विश्लेषण किया। दिङ्नाग ने वैध हेतु की पहचान के लिए त्रैरूप्य सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार हेतु का पक्ष में उपस्थित होना, समान उदाहरणों में पाया जाना और विपरीत उदाहरणों में अनुपस्थित होना आवश्यक है। इन शर्तों की पूर्ति होने पर अनुमान को तार्किक रूप से विश्वसनीय माना जाता है। बौद्ध परम्परा में अनुमान को सामान्यतः स्वार्थानुमान और परार्थानुमान के रूप में समझा गया है। स्वार्थानुमान वह है जिसके माध्यम से व्यक्ति स्वयं किसी निष्कर्ष तक पहुँचता है, जबकि परार्थानुमान का उद्देश्य तर्क के माध्यम से दूसरे व्यक्ति को किसी निष्कर्ष की सत्यता समझाना है। अनुमान का विषय सामान्यतः संकल्पनात्मक होता है और यह प्रत्यक्ष की भाँति वस्तु के स्वलक्षण को नहीं, बल्कि सामान्य लक्षणों और वैचारिक संबंधों को ग्रहण करता है। बौद्ध तर्कशास्त्र में कार्य-कारण संबंध और स्वभावगत संबंध अनुमान की विश्वसनीयता के महत्वपूर्ण आधार माने गए हैं। अनुमान के माध्यम से अनेक ऐसे तथ्यों का ज्ञान संभव होता है जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करना संभव नहीं होता। फिर भी बौद्ध दर्शन अनुमान को निराधार कल्पना नहीं मानता, बल्कि उसकी प्रामाणिकता के लिए तार्किक संगति और अनुभवजन्य आधार आवश्यक मानता है। इस प्रकार अनुमान प्रमाण बौद्ध ज्ञानमीमांसा में तर्कपूर्ण चिंतन का आधार प्रदान करता है तथा प्रत्यक्ष ज्ञान की सीमाओं का विस्तार करते हुए सत्य की विवेकपूर्ण खोज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

बौद्ध ज्ञानमीमांसा

बौद्ध ज्ञानमीमांसा ज्ञान की उत्पत्ति, स्वरूप, साधन, प्रामाणिकता और उसके मुक्तिपरक महत्त्व का व्यवस्थित दार्शनिक अध्ययन प्रस्तुत करती है। इसका मूल उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि यथार्थ ज्ञान क्या है, वह किस प्रकार प्राप्त होता है और भ्रमपूर्ण ज्ञान से उसका भेद किस आधार पर किया जा सकता है। बौद्ध दर्शन के अनुसार अविद्या मानव दुःख और संसार-चक्र का प्रमुख कारण है, इसलिए ज्ञानमीमांसा का संबंध केवल बौद्धिक समस्याओं से नहीं, बल्कि मनुष्य की आध्यात्मिक मुक्ति से भी है। प्रारम्भिक बौद्ध शिक्षाओं में ज्ञान को प्रत्यक्ष अनुभव, विवेकपूर्ण परीक्षण और साधना से जोड़ा गया, जबकि दिङ्नाग और धर्मकीर्ति ने इसे व्यवस्थित प्रमाणशास्त्रीय आधार प्रदान किया। उनके अनुसार प्रत्यक्ष और अनुमान दो प्रमुख स्वतंत्र प्रमाण हैं। प्रत्यक्ष वस्तु के विशिष्ट और तत्काल स्वरूप का ज्ञान प्रदान करता है, जबकि अनुमान संकल्पनात्मक एवं तार्किक प्रक्रिया के माध्यम से अप्रत्यक्ष विषयों का बोध कराता है। बौद्ध ज्ञानमीमांसा की एक विशिष्ट विशेषता यह है कि ज्ञान को किसी स्थायी आत्मा का गुण नहीं माना जाता, क्योंकि बौद्ध दर्शन स्थायी आत्मसत्ता को स्वीकार नहीं करता। ज्ञान स्वयं कारणों और परिस्थितियों पर



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

निर्भर होकर उत्पन्न होने वाली क्षणिक चेतन प्रक्रिया है। इस दृष्टिकोण का संबंध प्रतीत्यसमुत्पाद और क्षणिकवाद से गहराई से जुड़ा हुआ है। बौद्ध चिंतन में सत्य ज्ञान की व्यावहारिक प्रभावशीलता को भी महत्त्व दिया गया है; यथार्थ ज्ञान वह है जो वस्तु के अनुरूप सफल व्यवहार संभव बनाता है और मिथ्या धारणाओं का निराकरण करता है। साथ ही, बौद्ध ज्ञानमीमांसा का उच्चतर लक्ष्य प्रज्ञा का विकास है, जिसके द्वारा साधक अनित्य, दुःख, अनात्म और शून्यता जैसे सत्यों का गहन बोध प्राप्त करता है। इस प्रकार बौद्ध ज्ञानमीमांसा प्रत्यक्ष अनुभव, तार्किक विश्लेषण और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि का समन्वय प्रस्तुत करती है तथा ज्ञान को केवल सैद्धांतिक उपलब्धि न मानकर चेतना के रूपांतरण, अविद्या के विनाश और अंततः निर्वाण की प्राप्ति का प्रभावी साधन स्वीकार करती है।

वेदान्त दर्शन में ज्ञान की अवधारणा

वेदान्त दर्शन में ज्ञान की अवधारणा भारतीय दार्शनिक चिंतन की अत्यंत महत्त्वपूर्ण और केंद्रीय अवधारणाओं में से एक है, जिसका संबंध आत्मा, ब्रह्म, जगत और मोक्ष के यथार्थ स्वरूप के बोध से है। 'वेदान्त' का आधार मुख्यतः उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र और भगवद्गीता को माना जाता है, जिन्हें सामूहिक रूप से 'प्रस्थानत्रयी' कहा जाता है। वेदान्त की विभिन्न शाखाओं—अद्वैत, विशिष्टाद्वैत और द्वैत—में ज्ञान की प्रकृति तथा जीव-ब्रह्म संबंध की व्याख्या अलग-अलग रूपों में की गई है, फिर भी सभी परम्पराएँ यथार्थ ज्ञान को आध्यात्मिक उन्नति और मुक्ति के लिए महत्त्वपूर्ण स्वीकार करती हैं। विशेषतः अद्वैत वेदान्त में शंकराचार्य के अनुसार ज्ञान का सर्वोच्च स्वरूप ब्रह्मज्ञान या आत्मज्ञान है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानता है। अविद्या के कारण जीव स्वयं को शरीर, इन्द्रियों, मन और अहंकार से अभिन्न मानता है तथा जगत की नाम-रूपात्मक विविधता को परम सत्य समझता है। वास्तविक ज्ञान इस अज्ञान का निवारण करके यह बोध कराता है कि आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप में नित्य, शुद्ध, बुद्ध और मुक्त है तथा ब्रह्म से अभिन्न है। इस सत्य को 'तत्त्वमसि' और 'अहं ब्रह्मास्मि' जैसे उपनिषद् महावाक्यों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। वेदान्त में ज्ञान के दो स्तरों—व्यावहारिक और पारमार्थिक—का भेद भी महत्त्वपूर्ण है। व्यावहारिक ज्ञान सांसारिक वस्तुओं, संबंधों और गतिविधियों से संबंधित होता है, जबकि पारमार्थिक ज्ञान परम सत्य के प्रत्यक्ष बोध से जुड़ा है। ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए श्रवण, मनन और निदिध्यासन की प्रक्रिया को विशेष महत्त्व दिया गया है; श्रवण के माध्यम से साधक उपनिषदों की शिक्षाओं को ग्रहण करता है, मनन द्वारा उनके अर्थ पर तार्किक चिंतन करता है और निदिध्यासन के माध्यम से उस सत्य का गहन आत्मानुभव करता है। वेदान्त ज्ञानमीमांसा में प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द सहित विभिन्न प्रमाणों को स्वीकार किया गया है, किंतु इन्द्रियातीत ब्रह्म के ज्ञान के लिए श्रुति को विशिष्ट प्रमाण माना जाता है। विशिष्टाद्वैत में ज्ञान जीव और ईश्वर के वास्तविक संबंध को समझने तथा भक्ति को सुदृढ़ करने का माध्यम है, जबकि द्वैत में जीव और ईश्वर के शाश्वत भेद का यथार्थ बोध महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार वेदान्त में ज्ञान केवल बौद्धिक सूचना नहीं, बल्कि ऐसी आध्यात्मिक अनुभूति और रूपांतरणकारी चेतना है जो अविद्या का नाश करके वास्तविक सत्ता का बोध कराती है और साधक को उसके दार्शनिक मतानुसार मोक्ष की प्राप्ति की ओर अग्रसर करती है।



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

निष्कर्ष

बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन में ज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भारतीय दार्शनिक परम्परा में ज्ञान को केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं, बल्कि आत्मिक जागरण एवं जीवन-परिवर्तन का आधार माना गया है। बौद्ध दर्शन ज्ञान को प्रत्यक्ष अनुभव, तर्क, प्रज्ञा तथा यथार्थ के बोध से जोड़ते हुए अज्ञान (अविद्या) को दुःख का मूल कारण मानता है और निर्वाण की प्राप्ति के लिए सम्यक् ज्ञान पर बल देता है। इसके विपरीत वेदान्त दर्शन ब्रह्म को परम सत्य तथा आत्मा को ब्रह्म का अभिन्न स्वरूप स्वीकार करते हुए ब्रह्मज्ञान को मोक्ष का सर्वोच्च साधन मानता है। दोनों दर्शनों के ज्ञान सम्बन्धी सिद्धान्तों में आत्मा, परम सत्य तथा मुक्ति की अवधारणाओं को लेकर वैचारिक भिन्नताएँ अवश्य हैं, किन्तु दोनों इस तथ्य पर सहमत हैं कि अज्ञान मानव बन्धन का कारण है तथा वास्तविक ज्ञान ही जीवन को शान्ति, स्वतंत्रता एवं आध्यात्मिक पूर्णता की ओर ले जाता है। साहित्यिक एवं सैद्धान्तिक विश्लेषण से यह भी स्पष्ट होता है कि इन दोनों परम्पराओं ने भारतीय ज्ञान-परम्परा को समृद्ध बनाने के साथ-साथ दर्शन, धर्म, शिक्षा तथा नैतिक चिंतन को गहन वैचारिक आधार प्रदान किया है।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन की ज्ञान सम्बन्धी अवधारणाएँ अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होती हैं। आधुनिक समाज में बढ़ते मानसिक तनाव, नैतिक मूल्यों के हास, भौतिकतावाद तथा सामाजिक असंतुलन जैसी समस्याओं के समाधान हेतु इन दोनों दर्शनों के सिद्धान्त उपयोगी दिशा प्रदान करते हैं। बौद्ध दर्शन की प्रज्ञा, करुणा एवं आत्मानुशासन की भावना तथा वेदान्त दर्शन का आत्मबोध, अद्वैत, सार्वभौमिक एकता एवं आध्यात्मिक चेतना का सिद्धान्त मानव जीवन को संतुलित, नैतिक एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसलिए आवश्यक है कि इन दोनों दर्शनों के ज्ञान सम्बन्धी सिद्धान्तों का अध्ययन केवल दार्शनिक विमर्श तक सीमित न रहकर शिक्षा, मनोविज्ञान, नैतिक दर्शन, नेतृत्व, सामाजिक विज्ञान तथा मानवीय मूल्यों के विकास में भी व्यापक रूप से किया जाए। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि बौद्ध एवं वेदान्त दर्शन, अपने-अपने विशिष्ट ज्ञान-दृष्टिकोणों के माध्यम से भारतीय दर्शन की समृद्ध बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा आज भी सत्य, विवेक, आत्मज्ञान और मानव कल्याण की दिशा में प्रेरणास्रोत बने हुए हैं।

संदर्भ

1. गारफील्ड, जे. एल. (2015). बौद्ध धर्म से संवाद: दर्शन के लिए इसका महत्व। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
2. गारफील्ड, जे. एल. (2022). बौद्ध नैतिकता: एक दार्शनिक अन्वेषण। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
3. गुडमैन, सी. (2017). भारतीय एवं बौद्ध दर्शन में नैतिकता। रूटलेज.
4. गुप्ता, बी. (2019). चेतन अनुभव: हिन्दू एवं बौद्ध दृष्टिकोण। रूटलेज.
5. हैमिल्टन, एस. (2015). प्रारम्भिक बौद्ध धर्म: एक नवीन दृष्टिकोण। रूटलेज.
6. हार्वे, पी. (2017). बौद्ध धर्म का परिचय: सिद्धान्त, इतिहास एवं व्यवहार (द्वितीय संस्करण). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 7.2

ISSN No: 3049-4176

7. हाइम, एम. (2018). हृदय के शब्द: शास्त्रीय भारत की भावनाओं का संकलन। प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस.
8. जैकब्सन, के. ए. (सम्पा.). (2018). ब्रिल हिन्दू धर्म विश्वकोश (खण्ड-5). ब्रिल प्रकाशन.
9. कापस्टीन, एम. टी. (2016). तर्क के चिन्ह: भारतीय एवं तिब्बती बौद्ध चिन्तन में पहचान और व्याख्या। विजडम पब्लिकेशन्स.
10. किंग, एस. बी. (2015). बौद्ध धर्म और सामाजिक न्याय। स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क प्रेस.
11. लॉय, डी. (2019). ईकोधर्म: पर्यावरणीय संकट के लिए बौद्ध शिक्षाएँ। विजडम पब्लिकेशन्स.